REVIEW OF RESEARCH
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF) UGC APPROVED JOURNAL NO. 48514 ISSN: 2249-894X
VOLUME - 8 | ISSUE - 3 | DECEMBER - 2018

अस्पृश्य वर्ग एवं डॉ० भीमराव रामजी अम्बेडकर : एक पुनरावलोकन

डॉ०नरेन्द्र कुमार
सहायक प्राध्यापक (इतिहास) एन० आई० आई० एल० एम० विश्वविद्यालय कैथल, हरियाणा.

प्रस्तावना :

डॉ० भीमराव रामजी अम्बेडकर भारतीय संविधान के शिल्पकार, शोषित समाज के हृदय सम्राट व महान समाज–सुधारक थे। वे आजीवन सामाजिक अन्याय, कुरीतियों, आडम्बरों तथा अंधविश्वासों के विरूद्ध संघर्ष करते रहे। उन्होंने अस्पृश्यों को दासता से मुक्ति दिलाई। उनकी गिनती विश्व के गिने–चुने महापुरूषों में की जाती है।

डॉ० अम्बेडकर का मुख्य उद्धेश्य अस्पृश्य वर्ग की उन्नति के लिए भारतीय समाज में एक क्रांतिकारी बदलाव लाना था। इसका मुख्य कारण यह था कि वे अस्पृश्यता को मात्र सामाजिक भेदभाव की एक सामान्य समस्या नहीं मानते थे, बल्कि इसे साम्प्रदायिक समस्या से भी पेचीदा समस्या मानते थे।[1] उन्होंने कहा था कि अस्पृश्य वर्ग सदियों से हर दृष्टि से दबा–कुचला व शोषित वर्ग रहा है, जिस कारण से इसके प्रति भारतीय समाज में एक स्थाई पूर्वाग्रह व्याप्त हो गया है। उनका मानना था कि एक शोषित समुदाय होने के कारण अस्पृश्य वर्ग को राजनैतिक संरक्षण की बहुत अधिक आवश्यकता है,[2] इसलिए वे अस्पृश्यों के राजनैतिक सशक्तिकरण पर सर्वाधिक जोर देते थे। उन्होंने हर मंच से कहा कि मैं अस्पृश्यों के लिए राजनैतिक शक्ति चाहता हूँ, सत्ता में उनकी भागीदारी चाहता हूँ, राजनैतिक शक्ति के बिना उनका उत्थान सम्भव नहीं है,[3] इसलिए उन्होंने अस्पृश्य आंदोलन को एक राजनैतिक आंदोलन में बदल दिया था और अस्पृश्यों की राजनैतिक हिस्सेदारी की मांग हर जगह उठाई थी। उन्होंने गोलमेज सम्मेलनों में भी अस्पृश्यों के लिए पृथक् निर्वाचन मण्डल की मांग की थी। वहाँ पर उन्होंने इस बात पर जोर देते हुए कहा था कि हम सर्वप्रथम राजनैतिक शक्ति चाहते हैं, क्योंकि हम लोग अपने अधिकारों की रक्षा करना चाहते हैं।[4] उन्होंने गोलमेज सम्मेलन में यह भी कहा था कि अस्पृश्य वर्ग मुसलमान और ईसाईयों की तरह एक अलग समुदाय है। यहाँ तक कि वे उन हिन्दूओं से भी भिन्न माने जाते हैं, जिनके समाज में वे रहते हैं। हिन्दू समाज में उनको ऐसा निम्न स्थान दिया गया है, जो भारत में किसी अन्य धर्म वालों को भी नहीं मिला है। डॉ० अम्बेडकर स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व तक हमेशा अस्पृश्य वर्ग के राजनैतिक सशक्तिकरण के लिए पृथक् निर्वाचन मण्डल की मांग करते रहे। पृथक् निर्वाचन मण्डल से उनका आशय स्पष्ट है कि वे सर्वप्रथम अस्पृश्यों को एक अल्पसंख्यक समुदाय का दर्जा दिलाना

LBP PUBLICATION

चाहते थे। इसके पश्चात् वे चाहते थे कि अस्पृश्यों को अल्पसंख्यकों के समान राजनैतिक प्रतिनिधित्व का अधिकार प्रदान किया जाए, जिसके द्वारा उन्हें राजनैतिक संरक्षण व सशक्तिकरण का हक दिलाया जा सके।[5] इस संदर्भ में उनका कहना था कि राजनैतिक शक्ति सभी प्रकार की सामाजिक प्रगति की चाबी है और अस्पृश्य वर्ग अपनी मुक्ति तभी हासिल कर सकता हैं, जब वे स्वयं को एक तीसरी शक्ति अर्थात् तीसरी पार्टी के रूप में संगठित करते हुए प्रतिद्वन्दी राजनैतिक दलों के बीच सत्ता के ऊपर कब्जा कर ले।[6]

उनका मानना था कि अस्पृश्य समुदाय हर लिहाज से एक अल्पसंख्यक समुदाय है। उन्होंने कहा था कि अल्पसंख्यक शब्द का प्रयोग मात्र धार्मिक समुदायों हेतु करना, इस शब्द का गलत अर्थ लगाना है। धर्म ही अल्पसंख्यक होने की एकमात्र पहचान नहीं है। कोई समूह या समुदाय अल्पसंख्यक है या नहीं, इसकी पहचान सामाजिक आधार पर हो सकती है।[7] यह उल्लेखनीय है कि स्वयं गांधीजी ने भी धार्मिक पैमाने की तुलना में सामाजिक पैमाने को ही अधिक तर्क–संगत और व्यवहारिक माना है। इस कसौटी को अपनाते हुए उन्होंने 21 अक्तूबर 1939 ई०को 'हरिजन' के सम्पादकीय में 'दि फिक्शन ऑफ मैजोरिटी' नामक शीर्षक से छपे एक लेख के अन्तर्गत यह विचार रखा कि भारत में अस्पृश्य समुदाय ही वास्तविक अल्पसंख्यक समुदाय है।[8] आगे डॉ० अम्बेडकर ने कहा है कि अस्पृश्य समुदाय हिन्दू है, इसलिए वे पृथक् निर्वाचन मण्डल की मांग नहीं कर सकता, सही नहीं है। मुसलमानों को इसलिए पृथक् निर्वाचन मण्डल का अधिकार नहीं मिला है कि वे धर्म के मामले में हिन्दूओं से अलग हैं, बल्कि उन्हें इसलिए पृथक् निर्वाचन मण्डल का अधिकार मिला है कि हिन्दूओं और मुसलमानों के सामाजिक सम्बंध नहीं है।[9]

डॉ० अम्बेडकर ने आलोचकों की इस बात का भी खण्डन किया है कि अछूतों को पृथक् प्रतिनिधित्व मिलने से अछूतों और हिन्दूओं के बीच अलगाव हो जाएगा।[10] इसके जवाब में उन्होंने कहा कि अछूतों और हिन्दूओं के बीच अलगाव तो पहले से ही विद्यमान है। हिन्दूओं द्वारा अछूतों के विरूद्ध भेदभाव बरते जाने का खतरा सदा से ही विद्यमान रहा है। इस आधार पर अछूतों को राजनैतिक सशक्तिकरण दिया जाना चाहिए और हिन्दूओं के अत्याचारों से बचाव के लिए उन्हें राजनैतिक संरक्षण अवश्य दिया जाना चाहिए।[11] उन्होंने कहा कि चुनाव पाँच साल में केवल एक बार होते हैं। यह पूछा जा सकता है कि अछूतों द्वारा पाँच सालों में केवल एक दिन संयुक्त मतदान करने से सामाजिक एकता कैसे लाई जा सकती है? जबकि वे अछूत पाँच साल उन हिन्दूओं से अलग पृथक्ता का जीवन बिताते हैं। इसी प्रकार पाँच साल में केवल एक दिन पृथक् निर्वाचन में वोट देकर कैसे बड़ी कठिनाई आ जाएगी?[12] इस प्रकार उन्होंने संयुक्त निर्वाचन व्यवस्था को अस्पृश्य वर्ग के लिए निरर्थक बताया है।

भारत की स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् अस्पृश्यों के राजनैतिक संरक्षण के लिए उनका मानना था कि आज भारत के सभी अल्पसंख्यक समुदायों के लिए राजनैतिक शक्ति का होना बहुत आवश्यक है। ऐसा करके वे एक नवीन समाज की नींव को सुदृढ़ बना सकते हैं। यदि अल्पसंख्यक समुदाय निम्न जातियों के साथ मिलकर एक राजनैतिक दल बना ले तो वे प्रशासन को अपने हाथों में लेकर कानूनों का निर्माण कर एक ऐसे समाज की स्थापना कर सकते हैं,

LBP PUBLICATION

जो सदैव उनके हित में रहे।[13] उनका मानना था कि निम्न, सर्वहारा तथा अल्पसंख्यक वर्ग संगठित होकर राजनैतिक शक्ति को प्राप्त करके भारतीय समाज में भेदभावपूर्ण व्यवहार को रोक सकते हैं तथा भारत का सच्चे अर्थों में राष्ट्र निर्माण कर सकते हैं।

अस्पृश्यों को राजनैतिक संरक्षण क्यों जरूरी है? इस विषय पर उन्होंने स्पष्ट कहा है कि भारत जैसे देश में जहाँ अधिसंख्यक लोग साम्प्रदायिक प्रवृत्ति के हैं। वहाँ यह आशा करना कठिन है कि जो लोग सत्ता में होंगें, वे उन लोगों के साथ समान व्यवहार करेंगे, जो उनके सम्प्रदाय के नहीं हैं। भेदभावपूर्ण व्यवहार भारत के अस्पृश्यों के भाग्य में अपरिहार्य रहा है।[14] निम्न और अल्पसंख्यक वर्ग संगठित होकर ही ऐसे अमानवीय व्यवहार को रोक सकते हैं। अस्पृश्यों को जिन समस्याओं का सामना करना पड़ता है, वे बहुत ही भयंकर है। अस्पृश्य वर्ग उस विशाल स्वर्ण हिन्दूओं की आबादी से घिरा हुआ है, जो उनके प्रति शत्रुता का भाव रखते हैं और जो उनके खिलाफ अन्याय और अत्याचार करने में जरा भी लज्जित नहीं होते।[15] ऐसे में उन्होंने कहा है कि राजनैतिक शक्ति इस स्थिति से छुटकारा पाने के लिए प्राप्त करनी बहुत जरूरी है, परन्तु यह राजनैतिक शक्ति कैसे प्राप्त हो? इसके लिए उन्होंने सभी अल्पसंख्यक वर्गों एवं अस्पृश्य वर्ग को सामूहिक रूप से संगठित होने की आवश्यकता पर बल दिया। इसी उद्धेश्य हेतु उन्होंने 'रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इंडिया' की स्थापना की।[16] उनका यह राजनैतिक दल उनकी राजनैतिक विचारधारा का प्रतिबिम्ब था। वे इस पार्टी के माध्यम से निम्न, पिछड़े एवं अल्पसंख्यक वर्गों को संगठित करना चाहते थे तथा भारतीयों में स्वतंत्रता, समानता एवं भ्रातृत्व का प्रसार करना चाहते थे।[17]

भारत में 1957ई० में पहले आम चुनाव होने वाले थे। वे अपने जीवन में अस्पृश्य वर्ग को शासक वर्ग के रूप में देखना चाहते थे, इसलिए उनका नया विचार था कि समान विचारधारा वाली विपक्षी पार्टियों का राजनैतिक गठबंधन होना चाहिए। इसके जरिए वे अस्पृश्यों, पिछड़े वर्गों और अल्पसंख्यकों के दलों का गठजोड़ कायम करके कांग्रेस को सत्ता से पृथक् करना चाहते थे।[18] इसी उद्धेश्य की प्राप्ति के लिए उन्होंने समान विचारधारा वाली डॉ० राम मनोहर लोहिया की समाजवादी पार्टी से गठबंधन करने के लिए बात चलाई। उनकी पार्टियों का गठबंधन होने ही वाला था कि अचानक 6 दिसम्बर 1956ई० को डॉ० अम्बेडकर का देहान्त हो गया था। इस कारण उनका गठबंधन करके अस्पृश्यों को सत्ता में देखने का सपना अधूरा ही रह गया था।[19]

उन्होंने अस्पृश्य समुदाय को राजनैतिक संरक्षण व प्रतिनिधित्व दिलाए जाने के मुद्दे पर सर्वाधिक जोर दिया, क्योंकि वे अस्पृश्यों के राजनैतिक सशक्तिकरण को उनकी सभी समस्याओं का हल मानते थे। उनका कहना था कि अस्पृश्य वर्ग को अपनी समस्या के समाधान के लिए स्वयं सत्ता हासिल करनी चाहिए।[20] वे राजनैतिक शक्ति को सामाजिक, आर्थिक परिवर्तन का एक जरिया मानते थे। यद्यपि उनका मूल उद्धेश्य अस्पृश्य वर्ग का सामाजिक व आर्थिक उत्थान करना था। इसी को मद्देनजर रखकर वे भारतीय समाज में एक सामाजिक क्रांति लाना चाहते थे, जिससे अस्पृश्य वर्ग के शोषण व उत्पीड़न का सदा के लिए अन्त हो सके। वे अस्पृश्य वर्ग की दयनीय स्थिति के लिए हिन्दू वर्ण-व्यवस्था को जिम्मेदार मानते थे, इसलिए वे चाहते थे कि सर्वप्रथम भारतीय समाज में से वर्ण-व्यवस्था व जाति-प्रथा को खत्म किया जाए, जो

वास्तव में अस्पृश्यता के लिए उत्तरदायी है। उन्होंने अस्पृश्यता के सम्बंध में कहा कि जिस प्रकार विदेशों में गुलाम प्रथा थी, उसी प्रकार भारत में उससे भी बदत्तर अस्पृश्यता है।[21] अस्पृश्यता का मूल कारण जाति-प्रथा है, इसलिए वे जाति-प्रथा को हानिकारक संस्था मानते थे। जाति-प्रथा के अन्तर्गत व्यक्ति को ऐसे कार्य करने के लिए विवश होना पड़ता है, जो वे लोग करना नहीं चाहते।[22] उन्होंने पेशवाओं के शासन काल में अस्पृश्यों के साथ किए गए व्यवहार का उल्लेख करते हुए कहा है कि पेशवाओं के शासन काल में अस्पृश्यों को उस सड़क पर चलने नहीं दिया जाता था, जिस पर स्वर्ण हिन्दू आते-जाते थे, ताकि उनके साए से स्वर्ण हिन्दू भ्रष्ट न हो जाएं। अस्पृश्यों को अपनी पहचान के लिए काला धागा कलाई या गले में बांधना पड़ता था, ताकि स्वर्ण हिन्दू उन्हें गलती से भी छूकर भ्रष्ट न हों। पेशवाओं की राजधानी पूना में अस्पृश्यों को कमर में झाड़ू बांधकर चलना पड़ता था, ताकि जिस जमीन पर वे चलें, वह झाड़ू से साफ होती रहे और स्वर्ण हिन्दू उस पर चलकर भ्रष्ट न हों। पूना में ही अस्पृश्यों को गले में मिट्टी के बर्तन थूकने के लिए बांधकर निकलना पड़ता था, ताकि उनके थूक से अपवित्र जमीन पर पैर रखकर स्वर्ण हिन्दू अपवित्र न हों।[23] उन्होंने निम्न उदाहरणों का उल्लेख करने के पश्चात् कहा है कि क्या इस प्रकार के भेदभावपूर्ण वाले हिन्दू समाज को सभ्य समाज कहा जा सकता है। उन्होंने हिन्दूओं के इस दावे का भी खण्डन किया है कि विश्व के सभी धर्मों में हिन्दू धर्म सबसे उपर और सहिष्णु है। उन्होंने कहा कि वेदों और शास्त्रों में जिस हिन्दू धर्म का प्रतिपादन हुआ है, वह व्यर्थ के बलि विधान और सामाजिक व राजनीतिक नियमों का जाल है। उन्हें यह कहने में जरा भी हिचक नहीं थी कि इस प्रकार के धर्म को नष्ट किया जाना चाहिए। उन्होंने कहा है कि उन्हें उपनिषद्ों के उन सिद्धान्तों को ग्रहण करने में कोई आपत्ति नहीं थी, जो स्वतंत्रता, समानता व बंधुत्व की भावना के अनुरूप थे। हिन्दूओं को चाहिए कि वह, हिन्दू दर्शनजो सर्वव्यापी आत्मा का सिद्धान्त सिखाता है और गीता उपदेश देती है कि ब्राह्मण और चांडाल में भेद न करो, इनका पालन करके हिन्दू धर्म को एक श्रेष्ठ धर्म बनाए। उन्होंने हिन्दूओं से कहा कि यदि आप हिन्दू धर्म को बचाना चाहते हैं तो सर्वप्रथम मनुवाद को खत्म करो।[24] वे मानते थे कि जाति-प्रथा अलगाववाद को बढ़ावा देती है, जो स्वतंत्रता, समानता व बंधुत्व के रास्ते में बहुत बड़ी रूकावट है, इसलिए जब तक जाति-प्रथा का पूर्ण रूप से उन्मूलन नहीं होता, तब तक अस्पृश्य समुदाय का उत्थान नहीं हो सकता।[25]वे जाति-प्रथा को राष्ट्र निर्माण व राष्ट्र विकास के मार्ग में भी एक बहुत बड़ी बाधा मानते थे। उन्होंने कहा कि हिन्दूओं की अधिकत्तर सामाजिक संस्थाएँ जाति-प्रथा की बजाय दूसरी समस्याओं की तरफ अधिक ध्यान देती हैं, जबकि वे मानते थे कि भारतीय समाज में जाति प्रथा से बड़ी कोई समस्या नहीं है।[26] उनके अनुसार, इतिहास सामान्यतः इस बात पर बल देता है कि राजनीतिक क्रांतियाँ हमेशा सामाजिक व धार्मिक क्रांतियों के बाद हुई थी। जैसे:-ब्रिटेन में प्यूरिटनवाद के कारण ही राजनैतिक स्वतन्त्रता का विचार आया। प्यूरिटनवाद मूलतः एक धार्मिक आन्दोलन था।[27] इस प्रकार वे सामाजिक व धार्मिक परिवर्तन को ही किसी क्रांति का असली स्रोत मानते थे। उनके अनुसार, सामाजिक व्यवस्था में सुधार लाए बिना राजनीतिक व आर्थिक सुधार नहीं हो सकता, इसलिए उन्होंने सामाजिक सुधार को आवश्यक माना है।

उन्होंने जाति–प्रथा के उन्मूलन को हिन्दू समाज व धर्म के हित में अति अनिवार्य बताया है। जाति–प्रथा के उन्मूलन हेतु अनेक प्रकार के सुझाव देते हुए उन्होंने कहा है कि जाति–प्रथा को बनाए रखते हुए केवल अस्पृश्यता को खत्म करना ही काफी नहीं होगा। इसलिए हिन्दूओं की विभिन्न जातियों में परस्पर भोजन को ही नहीं, बल्कि अन्तर्जातीय सम्बन्धों का होना भी जरूरी है।[28] वर्ण–व्यवस्था को दैवीय एवं पवित्र मानने वाले हिन्दू धर्मशास्त्र भी जातिवाद के स्त्रोत हैं। यदि हिन्दूओं को धार्मिक ग्रन्थों की ऐसी व्यवस्थाओं से मुक्त कर दिया जाए तो वे अन्तर्जातीय विवाह एवं भोज अपनाने से नहीं हिचकिचाएगें, इसलिए व्यक्तिगत एवं सामाजिक जीवन में यदि कोई भी परिवर्तन आता है तो वह बुद्धि और नैतिकता का परिणाम होता है, लेकिन जब पवित्रता का स्थान बहुत शक्तिशाली बन जाता है तो बौद्धिक एवं नैतिक स्तर पर हानि होती है, क्योंकि इससे प्रगतिशील प्रवृत्तियों को निरूत्साहित होना पड़ता है। हिन्दू समाज–व्यवस्था को आदर्श एवं पवित्र ही नहीं समझा जाता, बल्कि उसे दैवीय माना जाता है, इसलिए यदि नवीन समाज की स्थापना करनी है तो धर्मशास्त्रों को दैवीय एवं पवित्र मानने की भावना का अन्त करना ही होगा।[29]

डॉ० अम्बेडकर सभी प्रकार के जाति भेद को समाप्त करना ही नहीं, बल्कि वर्ण–व्यवस्था को भी समाप्त करना चाहते थे। उनके अनुसार, अधिकार, उत्तरदायित्व तथा प्रतिष्ठा आकस्मिक जन्म के आधार पर नहीं, बल्कि योग्यता के आधार पर आधारित होनी चाहिए।[30]

उनका मानना था कि हिन्दूओं के सामाजिक जीवन में एक मौलिक परिवर्तन की जरूरत है। नवीन सामाजिक चेतना के जरिये प्राचीन मूल्यहीन बातों का अन्त करना होगा। अतः हिन्दू धर्म को स्वतंत्रता, समानता और भ्रातृत्व के सिद्धान्तों के आधार पर पुनर्गठित करने के लिए उन्होंने जाति के पीछे विद्यमान धार्मिक पवित्रता को भी खत्म करने की बात कही है। उनका प्रमुख उद्धेश्य अस्पृश्य वर्ग को स्वर्ण हिन्दूओं के शोषण से मुक्ति दिलवाना तथा भारतीय समाज में मौलिक सामाजिक परिवर्तन उत्पन्न करना था।

डॉ० अम्बेडकर अस्पृश्यों के आर्थिक उत्थान के प्रति भी चिंतित थे, इसलिए उन्होंने अस्पृश्यों के उत्थान के लिए कुछ विशेष सुझाव दिए। जहाँ तक अस्पृश्यों के उत्थान का सम्बंध है, ऐसा वे इसलिए आवश्यक मानते थे, क्योंकि अस्पृश्यों की समस्या काफी जटिल आर्थिक समस्या है, इसलिए उन्होंने अस्पृश्यों के आर्थिक स्तर को स्वर्ण हिन्दूओं के बराबर लाने के लिए अस्पृश्यों को विशेष अवसर प्रदान करने की मांग की थी।[31] उनका मानना था कि केवल कानूनी बराबरी प्राप्त होने से अस्पृश्यों का उत्थान असम्भव है, इसलिए उन्होंने अस्पृश्यों के सम्बंध में विभेदात्मक संरक्षण के सिद्धान्त को अपनाने पर बल दिया है।[32] उन्होंने अस्पृश्यों के आर्थिक उत्थान हेतु कहा कि अस्पृश्यों को जातिवाद के बिना सेना व पुलिस में भर्ती किया जाए। वे राजनैतिक शक्ति को अस्पृश्यों की उन्नति का जरिया मानते थे, इसलिए उन्होंने अस्पृश्य वर्ग के आर्थिक उत्थान के लिए भी राजनैतिक हिस्सेदारी की मांग की थी।[33] उनका मानना था कि अस्पृश्यों के लिए प्रशासनिक सेवाओं में स्थान सुरक्षित किए जाएं तथा कार्यपालिका व मंत्रिमण्डल में अस्पृश्यों के प्रतिनिधि नियुक्त किए जाएं, ताकि वे सरकार में अस्पृश्य वर्ग के हितों की रक्षा कर सके।[34]

उन्होंने गोलमेज सम्मेलनों में सम्पूर्ण विश्व के प्रतिनिधियों के समक्ष अस्पृश्यों की आर्थिक दशा के उत्थान के लिए कई मांगें पेश की, जैसेः–अस्पृश्यों के आर्थिक उत्थान के लिए एक अलग से विभाग बनाया जाए तथा अस्पृश्यों के उत्थान का कार्य केन्द्रीय सरकार अपने हाथ में ले।[35]

वे केवल अस्पृश्यों के आर्थिक उत्थान से संतुष्ट नहीं थे, क्योंकि वे मानते थे कि अस्पृश्य वर्ग उस भारतीय समाज का हिस्सा है, जो गरीबी और दरिद्रता जैसी आर्थिक समस्याओं से घिरा हुआ है। वे भारत में समतामूलक समाज की स्थापना करना चाहते थे, इसलिए उनका मानना था कि गरीबी और शोषण से जुड़ी समस्याओं के समाधन के लिए समाजवादी मार्ग ही भारत के लिए काफी हद तक सही है। उन्होंने अपने समाजवादी सिद्धान्त में ग्राम पंचायतों के पुनर्गठन को भी अति आवश्यक माना है। उन्होंने कहा है कि पंचायती राज में ग्रामीण जीवन में उच्च जातियों का वर्चस्व स्थापित होने का खतरा होता है, जिसका सबसे अधिक नुकसान अस्पृश्यों को होता है, इसलिए वे चाहते थे कि अस्पृश्यों को पंचायती राज प्रणाली में संरक्षण दिया जाए। इस समस्या के समाधान हेतु ग्राम पंचायतों में अस्पृश्य वर्ग के प्रतिनिधित्व की व्यवस्था नामांकन द्वारा करनी चाहिए। नामांकन या तो जिलाधिकारी या फिर जिले के स्थानीय बोर्ड के अध्यक्ष द्वारा होना चाहिए। प्रत्येक ग्राम पंचायत में अस्पृश्य वर्ग का कम से कम एक सदस्य होना चाहिए।[36] राज्य द्वारा समाजवाद का सिद्धान्त अपनाकर भारत में जातिभेद पर आधारित आर्थिक विभेद की बुराईयों का अन्त किया जा सकता है। समाज की नींव समता व लोकतंत्र पर आधारित होनी चाहिए, जिससे समाज में आर्थिक समृद्धि आ सके।[37] अस्पृश्यों के साथ असमानता व भेदभाव का व्यवहार न हो, उनकी बेरोजगारी का अन्त हो, आर्थिक जीवन में उनकी भागीदारी सुनिश्चित हो, आदि। इस उद्धेश्य को पाने के लिए उन्होंने राज्य समाजवाद का सिद्धान्त प्रस्तुत किया। वे केवल अस्पृश्य वर्ग के आर्थिक सशक्तिकरण तक ही सीमित नहीं थे, बल्कि वे भारतीय समाज से विषमता, गरीबी व दरिद्रता जैसी समस्याओं का भी अन्त करना चाहते थे, इसलिए उन्होंने आधुनिक भारत को समाजवादी मार्ग पर चलने हेतु कहा। उनके इन विचारों का असर भारतीय संविधान पर भी पड़ा, जोकि मूलतः समाजवादी प्रणाली को लागू करने पर जोर देता है।

उन्होंने धर्म को समाज के लिए अनिवार्य मानते हुए कहा है कि मैं धर्म की नींव को समाज के जीवन तथा व्यवहारों के लिए अनिवार्य मानता हूँ।[38] उनके अनुसार, मनुष्य मात्र रोटी के सहारे जीवित नहीं रह सकता। उसका एक मस्तिष्क भी होता है, जिसे विचार रूपी खुराक की जरूरत होती है। धर्म मनुष्य में आशा का संचार करता है और उसे कर्म करने के लिए प्रेरित करता है।[39]

डॉ० अम्बेडकर ने अपने धार्मिक दर्शन में सच्चे धर्म की आवश्यकता पर बल दिया है, लेकिन उन्होंने यह बात सच्चे धर्म के लिए कही है, न कि सभी विद्यमान धर्मों को लेकर कही है। उनके अनुसार, यदि कोई धर्म अपने अनुयायियों को उपयोगी संगठन की अनुमति नहीं देता, आत्म–सम्मान, परस्पर सहयोग एवं भ्रातृत्व पैदा नहीं करता, सत्ता एवं प्रतिष्ठा प्राप्त नहीं करने देता, व्यवसाय तथा कार्य की स्वतंत्रता को प्रतिबंधित करता है, समता भाव से वंचित रखता है, वह अच्छा धर्म नहीं है।[40] उन्होंने स्पष्ट रूप में कहा है कि वह धर्म, जो मनुष्य को मनुष्य

के साथ अमानवीय ढ़ग से व्यवहार करने का उपदेश देता है, धर्म नहीं है, अपितु एक अपकीर्ति है। वह धर्म, जो मानव प्राणी को एक मानव प्राणी के रूप में नहीं मानता, वह अभिशाप है। वह धर्म, जिसके अन्तर्गत पशुओं के स्पर्श की अनुमति है, लेकिन एक मानव प्राणी का स्पर्श दूषित करता है, वह धर्म नहीं है, बल्कि धर्म का मजाक है। वह धर्म, जो कुछ वर्गों को शिक्षा से अलग रखता है, उन्हें धन संचय और शस्त्र रखने से रोकता है, वह धर्म नहीं, बल्कि एक निरंकुशता है। वह धर्म, जो अज्ञानी को अज्ञानी और निर्धन को निर्धनबने रहने के लिए बाध्य करता है, वह धर्म कहलाने योग्य ही नहीं है।[41]

डॉ० अम्बेडकर ने सभी धर्मों की तुलना में बौद्ध धर्म को ही सच्चा धर्म कहा हैं। उनके अनुसार, बौद्ध धर्म ही ऐसा धर्म है, जिसने पीड़ित मानवता की करूणा भरी पुकार सुनी है और उसे दूर करने का संकल्प लिया है। बौद्ध धर्म सदाचार का, मानवीय दया का और मनुष्य के उद्धार का धर्म है, जिसने दीन-हीन, दुखी-पीड़ित और गरीब की पुकार सुनी है। उन्होंने इस धर्म को विज्ञान एवं बुद्धिसंगत पाया, जिसमें गॉड, अल्लाह या ईश्वर की सहायता के बिना मार्ग तय किया जा सकता है। बौद्ध धर्म में मनुष्य ही अध्ययन तथा सेवा का मुख्य आधार एवं केन्द्र है। बुद्धिज्म में अन्तर्निहित मूल विचार मानव प्राणियों के लिए आध्यात्मिक एवं भौतिक उन्नति का वातावरण पैदा करना है। उनकी तर्क बुद्धि के अनुसार, बौद्ध धर्म में स्वतंत्रता, समानता व बंधुत्व की भावना विद्यमान है।[42] उन्होंने इस धर्म को व्यापक सामाजिक उत्तरदायित्व का धर्म माना है, जो किसी एक वर्ग तक सीमित नहीं है। बौद्ध धर्म समस्त लोगों को हिंसा एवं दुखः की बेड़ियों से मुक्त करने वाला धर्म है। बौद्ध धर्म का मुख्य उद्धेश्य मानवता का उद्धार करना है।[43]

डॉ० अम्बेडकर ने हिन्दू धर्म में सुधार के सम्बंध में भी काफी कुछ कहा है। डॉ० अम्बेडकर अपने पैतृक धर्म से अनुग्रह रखते थे और अपने जीवन के अंतिम वर्षों तक वे हिन्दू ही रहे। उन्होंने हिन्दू धर्म को अस्पृश्यों सहित सभी अनुयायियों के लिए अनुकूल बनाने तथा विश्व का श्रेष्ठ धर्म बनाने के लिए काफी विचार-विमर्श किया है। उन्होंने अपनी पुस्तक 'रिडल्स इन हिन्दूज्म' में हिन्दू धर्म की उलझनपूर्ण स्थिति की आलोचना की है, लेकिन इसके पीछे उनका उद्धेश्य हिन्दू धर्म को स्पष्ट, सरल, सुबोध व सर्वग्राही बनाना था, ताकि यह धर्म किसी भी व्यक्ति को आसानी से स्वीकार्य हो सके,[44] इसलिए सर्वप्रथम उन्होंने हिन्दू धर्म में सुधार के लिए धार्मिक व सामाजिक क्षेत्रों में पुरोहितों व मनुवादियों की श्रेष्ठता, सर्वोच्चता व प्रभुत्व को समाप्त करने की बात कही है। उन्होंने सुझाव दिया है कि हिन्दू धर्म के उत्थान के लिए सभी हिन्दू जातियों से योग्यता के आधार पर पुरोहितों का चयन करना चाहिए। इससे जाति-व्यवस्था समाप्त होगी तथा साथ ही हिन्दू धर्म में सर्वोच्च स्थान पर पहुँचने का मार्ग सभी के लिए खुल जाएगा और इससे हिन्दू धर्म का विकास होगा। उनका मानना था कि हिन्दू धर्म को एक मानवतावादी धर्म में बदलने के लिए उन सभी धर्मग्रन्थों जैसे:-वेद, ब्राह्मण ग्रन्थ, स्मृतियाँ, पुराण आदि की सर्वोच्चता को समाप्त किया जाना चाहिए, क्योंकि ये किसी न किसी रूप में असमानतामूलक सिद्धान्तों का समर्थन करते हैं।[45] चूंकि जाति-व्यवस्था व अस्पृश्यता आदि को अनेक धर्मशास्त्रों में मान्यता दी गई है। उनका मानना था कि जाति-व्यवस्था ने हिन्दू धर्म को पूर्णतः पंगू बना दिया है। वे जाति-व्यवस्था के उन्मूलन को हिन्दू धर्म के सुधार हेतु

अनिवार्य मानते थे, क्योंकि जाति–व्यवस्था के कारण हिन्दू धर्म सहस्रों जातियों में विभक्त है। इसके कारण जहाँ स्वर्ण जातियों को विशेषाधिकार प्राप्त हुए, वहीं अस्पृश्य जातियों को सामाजिक अन्याय व शोषण का शिकार होना पड़ा।[46] अतः हिन्दू धर्म में सुधार हेतु उन्होंने जाति–व्यवस्था के उन्मूलन पर बल दिया है।

डॉ० अम्बेडकर का धर्म दर्शन पूर्णतः मानवतावादी था। वे धर्म के नाम पर किसी प्रकार की अज्ञानता, शोषण, सामाजिक अलगाव व दमन नहीं चाहते थे। उनके अनुसार, किसी भी धर्म को केवल उन्हीं मूल्यों को स्वीकार करना चाहिए, जो व्यक्ति और समाज की प्रगति में सहायक हो। अतः ऐसे मानवतावादी धर्म की आवश्यकता है, जो सभी को एकत्रित कर सके तथा अनावश्यक भेदभावों को मिटा सके। उन्होंने कहा कि दुर्भाग्यवश हिन्दू धर्म ऐसा धर्म नहीं बन पा रहा है। अतः इसलिए उन्होंने इस धर्म को छोड़ना ही एकमात्र विकल्प समझा। उन्होंने हिन्दू धर्म को छोड़कर बौद्धधर्म ग्रहण किया तथा बौद्ध धर्म अपनाने का सुझाव अन्य अस्पृश्य वर्गों के लोगों को भी दिया। उनके अनुसार, बौद्ध धर्म ही ऐसा धर्म है, जो उनके अनुरूप था तथा जिसमें प्रेम, समता व बंधुत्व के तत्व मौजूद हैं। इसमें मनुष्य की तमाम सार्वभौमिक आवश्यकताओं को समझा गया है।[47] अतः कह सकते है कि वे बुद्धि पर आधारित धर्म को चाहते थे, ताकि अंधविश्वासों को उसमें कोई स्थान न मिल पाए तथा जिसका मूल आधार केवल मानव कल्याण ही हो। उन्हें ऐसा धर्म केवल बौद्ध धर्म ही लगा। उन्होंने कहा है कि बौद्ध धर्म प्रारम्भ से लेकर अन्त तक मानवतावादी है।[48]

अतः कह सकते है कि डॉ० अम्बेडकर उस धर्म में विश्वास नहीं करते थे, जो शोषण, असमानता, अत्याचार, जाति–पाति तथा कुछ ही व्यक्तियों के हितों पर ध्यान देता हो। वह उस धर्म को मानते थे, जो समता, भ्रातृत्व तथा स्वतंत्रता पर आधारित हो। उनके अनुसार, ये सभी बातें बौद्ध धर्म में मिलती हैं, इसलिए उन्होंने अस्पृश्यों को बौद्ध धर्म ग्रहण करने के लिए कहा था।

निष्कर्ष:

अतः हम कह सकते हैं कि डॉ० अम्बेडकर का मुख्य उद्धेश्य अस्पृश्य व निम्न वर्ग की स्थिति को सुधारना था। उनके अनुसार, अधिकार, उत्तरदायित्व तथा प्रतिष्ठा आकस्मिक जन्म के आधार पर नहीं, बल्कि योग्यता के आधार पर आधारित होनी चाहिए। वे स्वतंत्रता, समानता और भ्रातृत्व के सिद्धान्तों के आधार पर समाज को गठित करना चाहते थे। उनका मानना था कि सामाजिक व्यवस्था में सुधार लाए बिना राजनीतिक व आर्थिक सुधार नहीं हो सकता, इसलिए उन्होंने सामाजिक सुधार को आवश्यक माना है। डॉ० अम्बेडकर यद्यपि परम्परावादी अर्थ में दार्शनिक नहीं थे, फिर भी उन्होंने अपने राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक तथा धार्मिक विचारों एवं आदर्शों को, अधिकत्तर एक दार्शनिक की भांति चिन्तन और स्वयं को एक राजनीतिज्ञ के रूप में प्रतिष्ठित करते हुए आदर्शवाद तथा यथार्थवाद, अनुभववाद एवं बुद्धिवाद, प्रकृतिवाद व मानववाद, व्यक्तिवाद तथा समाजवाद, राष्ट्रवाद और अन्तर्राष्ट्रीय के बीच द्वन्दों से अवतरित किया।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. बाबा साहेब डॉ० अम्बेडकर सम्पूर्ण वाड्मय, खण्ड–1, नई दिल्ली, 1993, पृ० 197–98
2. वही, खण्ड–10, नई दिल्ली, 1996, पृ० 425
3.वही, खण्ड–2, नई दिल्ली, 1993, पृ० 150
4. वही, पृ० 133
5. डी० आर० जाटव, डॉ० अम्बेडकर का राजनीतिक दर्शन, जयपुर, 1996, पृ० 57
6.B. K. Ahluwalia & S. R. Ahluwalia, Dr. Ambedkar and Human Rights, New Delhi, 1991, p.98
7. बी० आर० अम्बेदकर, (अनु० जगन्नाथ प्रसाद कुरील), कांग्रेस व गांधीजी ने अछूतों के लिए क्या किया? लखनऊ, 1988, पृ० 67
8. बाबा साहेब डॉ० अम्बेडकर सम्पूर्ण वाड्मय, खण्ड–2, पृ० 208
9. वही
10. बी० आर० अम्बेडकर, कांग्रेस व गांधी जी ने अछूतो के लिए क्या किया?, पृ० 66–67
11. बाबा साहेब डॉ० अम्बेडकर सम्पूर्ण वाड्मय, खण्ड–2, पृ० 219
12. एल० आर० बाली, डॉ० अम्बेडकर जीवन और मिशन, नागपुर, 1992, पृ० 219
13.Bhagwan Dass (ed.), Thus Spoke Ambedkar, Vol.-1, Jalandhar, 1963, p.77
14. बाबा साहेब डॉ० अम्बेडकर सम्पूर्ण वाड्मय, खण्ड–5, नई दिल्ली, 1994, पृ० 191
15. वही, पृ० 199
16. वही, खण्ड–3, नई दिल्ली, 1994, पृ० 285
17. डी० आर० जाटव, डॉ० अम्बेडकर का राजनीतिक दर्शन, पृ० 245
18. बी० आर० अम्बेडकर, पूर्व उद्धृत, पृ० 188
19. बाबा साहेब डॉ० अम्बेडकर सम्पूर्ण वाड्मय, खण्ड–9, नई दिल्ली, 1998, पृ० 42
20. डी० आर० जाटव, राष्ट्रीय आंदोलन में डॉ० अम्बेडकर की भूमिका, जयपुर, 1989, पृ० 14
21. बाबा साहेब डॉ० अम्बेडकर सम्पूर्ण वाड्मय, खण्ड–9, पृ० 49
22.B. R. Ambedkar, Annihilation of Caste, Bombay, 1936, p. 21
23. Dr. Baba Saheb Ambedkar: Rights and Speeches, Vol. -1, Bombay, 1979, p. 39
24. मधुलिमये, डॉ० अम्बेडकर एक चिंतन, नई दिल्ली, 1990, पृ० 17–23
25.B. R. Ambedkar, Annihilation of Caste, Bombay, 1936, p. 157-58
26. बाबा साहेब डॉ० अम्बेडकर सम्पूर्ण वाड्मय, खण्ड–1, पृ० 58–59
27. वही, पृ० 61
28. मधुलिमये, पूर्व उद्धृत, पृ० 17
29. बाबा साहेब डॉ० अम्बेडकर सम्पूर्ण वाड्मय, खण्ड–1, पृ० 60
30. मधुलिमये, पूर्व उद्धृत, पृ० 17
31. वही, खण्ड–6, नई दिल्ली, 1998, पृ० 142–146
32.Bhagwan Dass (ed.), Thus Spoke Ambedkar, Vol.-1, Jalandhar, 1963, p. 30-33
33. बाबा साहेब डॉ० अम्बेडकर सम्पूर्ण वाड्मय, खण्ड–4, नई दिल्ली, 1998, पृ० 162–163

LBP PUBLICATION

34. वही, खण्ड–5, पृ॰ 67–68
35. वही, खण्ड–9, पृ॰ 91–92
36. वही, खण्ड–3, पृ॰ 124
37. वही, खण्ड–1, पृ॰ 298–99
38.Dr. Baba Saheb Ambedkar and the Movement of Untouchability, Vol.-1, Bombay, 1982, p. 138
39. धन्नजय कीर, डॉ॰ बाबा साहेब अम्बेडकरः जीवन चरित, बम्बई, 1984 पृ॰ 499
40. डी॰ आर॰ जाटव, डॉ॰ अम्बेडकर का धर्म–दर्शन, जयपुर, 1997, पृ॰ 32
41.Bhagwan Dass (ed.), Thus Spoke Ambedkar, Vol.-4, Jalandhar, 1984, p. 61-62
42. डी॰ आर॰ जाटव, पूर्व उद्धृत, पृ॰ 52–53
43.Bhagwan Dass (ed.), Thus Spoke Ambedkar, Vol.-2, Jalandhar, 1969, p. 163
44.Dr. Baba Saheb Ambedkar: Rights and Speeches, Vol. -4, Bombay, 1987, p. 81-82
45. बाबा साहेब डॉ॰ अम्बेडकर सम्पूर्ण वाड्मय, खण्ड–1, नई दिल्ली, 1993, पृ॰ 101–102
46. वही, खण्ड–9, पृ॰ 49
47.B. R. Ambedkar, Buddha and his Dhamma, Bombay, 1957, p. 328
48. वही, पृ॰ 268

LBP PUBLICATION